IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

जात्रा की उत्पति और विकास की यात्रा

जय प्रकाश तिवारी

पी.एच.डी, शोधार्थी

परफोर्मिंग एंड फाइन आर्ट डिपार्टमेंट

पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय

सारांश

जात्रा बंगाल, ऑडिशा, तथा पूर्वी बिहार में एक प्रचलित लोक कला है, जात्रा को यात्रा के नाम से भी जाना जाता है। जात्रा लोक कला की प्रस्तुति में गायन तथा संवाद, वेशभूषा, मुख्सज्जा आदि इसे और विशिष्ट बनाते है। जात्रा की सांस्कृतिक और पारंपरिक यात्रा रही है, जिसमें अभिनय के साथ संगीत गायन ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस लेख के माध्यम से मुख्यतः जात्रा, उसके कलाकार, नाटक के पात्र, संगीत और गायन की यात्रा, मंडप, और इसके कथानक में हुए परिवर्तन, जात्रा के प्रारम्भिक स्वरूप से वर्तमान स्वरूप तथा जात्रा के व्यवसायीकरण होने के बारे में अध्ययन किया जाएगा।

मुख्य शब्द- जात्रा, यात्रा, संगीत, पात्र, लोककला, लोकनाट्य

भारत प्रारंभ से ही भिन्न-भिन्न कलाओं का मठ रहा है। जिसमें लोक कलाएं, सांस्कृतिक और पारंपरिक श्रृंगार करती आ रही हैं। यहाँ तक कि वैदिक युग भी यात्रा से परिचित था। यात्रा आर्यों की अतिप्राचीन प्रसिद्ध पैतृक संपत्ति है। ऋग्वेद के देवताओं की स्तुति संगीतमय जुलूस में हुआ करती थी। सामवेद के कई मंत्र आदिम यात्रा-नृत्यों के असंस्कृत विनोद की सीमा तक पहुँच जाते हैं। लोक कलाएं किसी भी समाज की शैली, भाषा, मनोरंजन माध्यम, संस्कृति, पहनावे, संगीत और उनके रस का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें नाट्य, नृत्य और संगीत मुख्य होता है। डॉ. कीथ के अनुसार वैदिककाल के यज्ञ-संबंधी संवादों से भारतीय नाटक का विकास नहीं हुआ, प्रत्युत यात्रा नामक जननाटकों के प्रभाव से प्रभावित आर्य विद्वंमडली ने संस्कृत नाटकों की एक नई शैली निकाली। इस काल में भी मौलिक जननाटक-शैली अबाध गति से अपने स्वाभाविक पथ पर चलती ही रही, जिससे आगे चलकर देशी भाषाओं के नाटक निकले।(Keith, 1988)। ऐसे ही 15वीं शताब्दी में बंगाल के इतिहास से हमारे सामने एक लोक नाट्य शैली है, जिसको जात्रा/यात्रा कहा गया है। इस आंदोलन रूपी परंपरा जिसको लोग घूम-घूमकर प्रदर्शित करते थे। जात्रा के बारे में 'फोल्क थिएटर ऑफ़ इंडिया' में लिखा गया है-

The collective singing amidst the clang of gongs and fumes of incense produced a mass hypnosis and sent these singers into an acting trance. This singing with dramatic elements gradually came to be known as "Jatra," which means "to go in a procession"(Gargi, 1966)। इसलिए इसे यात्रा भी कहते हैं। इसी से संगीत की महत्वता जात्रा में मुख्य हो जाती है। जब भी बंगाल के इतिहास पर नजर जाती है, हम उससे जुड़े भक्ति आंदोलन को अपने सामने पाते है। जात्रा का रूप उड़ीसा और बिहार के पूर्वी हिस्सों में समान रूप से लोकप्रिय है, लेकिन इसकी उत्पत्ति धान के खेतों, नाविकों, संत कवियों, पश्चिमी औद्योगीकरण और सामाजिक और राजनीतिक उथल-पुथल की भूमि बंगाल में हुई थी। प्रभु

श्री कृष्ण के भक्त श्री चेतन्य महाप्रभु, अपने परमात्मा की लीलाओं का प्रचार करते थे। श्री चेतन्य महाप्रभु और उनके शिष्य बसों, ट्रेनों, सड़कों पर श्री कृष्ण की लीलाओं का अभिनय द्वारा प्रदर्शन और संगीत के माध्यम से उनकी लीलाओं का गान करते थे। श्री कृष्ण लीला का एक प्रसिद्ध प्रकरण है 'रुकमणी हरण', जिसमें श्री कृष्ण रुकमणी का अपहरण करते हैं, और फिर उन्ही से विवाह करते हैं। यह प्रकरण इसलिए भी प्रसिद्ध है, क्योंकि स्वयं चेतन्य महाप्रभु इस लीला को अनेकों बार प्रदर्शन कर चुके हैं तथा वह स्वयं रुकमणी का पात्र अभिनीत करते थे। प्रारंभ में जात्रा रात भर चलने वाली लोक कला थी, जिसका धीरे-धीरे समय घटाकर कुछ घंटों में सीमित हो गया। इसी प्रकार प्रारंभ में जात्रा केवल पुरुष ही श्रृंगार और वस्त्र ग्रहण करके प्रस्तुति किया करते थे। 20वीं सदी के बाद इसमें महिलाओं ने पुरुषों के साथ अपना योगदान दिया। स्वतंत्र भारत से पूर्व भी जात्रा का राजनीतिक और सामाजिक प्रारूप था- 'स्वदेशी जात्रा', जब लोगों का ब्रिटीशर्स के खिलाफ आक्रोश पनपने लगा तब स्वदेशी जात्रा एक प्रकार का आंदोलन था, जिसमे लोगों के अंदर ब्रिटीशर्स को निकाल फेंकने की भावना उमड़ी, स्वदेशी जात्रा के माध्यम से लोगों को जागृत किया जाता था ताकि लोग ब्रिटीशर्स के खिलाफ लड़ें। 19वीं सदी में, ब्रिटिश शिक्षा के प्रभाव और राष्ट्रीय आंदोलन के उदय के साथ, दो समानांतर विकास हुए, एक पश्चिमी मॉडल पर आधारित आधुनिक थिएटर के विकास से संबंधित और दूसरा पारंपरिक थिएटर के माध्यम से सामाजिक सुधार और राजनीतिक विरोध के लिए, और यह दोनों समानांतर प्रवृत्तियाँ थीं। तार्किक रूप से यद्यपि विरोधाभासी प्रतीत होती थीं। इस प्रकार शेक्सपियर और अन्य अंग्रेजी नाटककारों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया गया और प्रोसेनियम मंच पर प्रस्तुत किया गया, वहीं राष्ट्रीय चिंताओं और राजनीतिक विषयों को यात्रा के लिए अनुकूलित किया गया। परिणामस्वरूप, स्वदेशी यात्रा के नाम से जाना जाने वाला, एक विशिष्ट रूप बंगाल के अस्तित्व में आया। महात्मा गांधी का असहयोग आंदोलन और अस्पृश्यता निवारण आदि जात्रा के पसंदीदा विषय थे। यह प्रवृत्ति 1947 के बाद भी जारी रही, जहां विद्यासागर, राजा राममोहन राय, हिटलर और अन्य राजनीतिक नेताओं के जीवन से लेकर ज्वलंत सामाजिक समस्याओं तक सभी प्रकार के सामाजिक-राजनीतिक विषयों को शक्तिशाली और प्रभावी ढंग से जात्रा के माध्यम से उठाया गया(Vatsyayan, 1980)। स्वतंत्र भारत की आवाज का माध्यम, जात्रा को बनाकर आम लोगों तक पहुंचाया गया। स्वतंत्रता से पूर्व जो नाटक खेले जाते थे, वह भारत कि लड़ाई लड़ रहे बहादूर स्वतंत्रता सेनानियों को बल देने के लिए होते थे। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान जब जर्मनी ने रशिया पर चढ़ाई करी, इंडियन पीपल्स थिएटर एसोसिएशन (ipta) ने जात्रा लोक कला के माध्यम से कमुनिस्ट पार्टी के समर्थन के लिए लोगों को जोड़ने का कार्य किया। 20वीं सदी की शुरुआत में कम्यूनिज़म लोगों के बीच प्रचलन में था और कम्युनिज़म के सबसे बड़े नेता लेनिन थे, लोगों के बीच कम्युनिज़म के विचार को, उनकी जीवनी को, अतिनाटकीय रूप देकर, जात्रा द्वारा प्रस्तुत किया जाता था।

जात्रा का स्वरूप : जात्रा का स्वरूप कुछ आज के आधुनिक सिनेमा की तरह मिलता है। जात्रा नाटक की पराकाष्ठा (climax) प्रारंभ में ही दिखाया जाता है, जो किसी नाटक, उपन्यास और कहानी के सबसे रोचक हिस्से से प्रारंभ होता है और फिर उससे पूर्व घटित होने वाली लीलाओं को दिखाया जाता है, जिससे दर्शकों के मन में उसके लिए जिज्ञासा आ जाये और वह पूरा नाटक अंत तक देखें(Gargi, 1966)। किसी भी लोक कला के प्रदर्शन का वर्ष में कोई खास दिवस और समय होता है, उसी तरह जात्रा भी दुर्गा पूजा के आसपास और बरसात के मौसम से पहले तक चलता है, या यूँ कहें सितम्बर से जून के महीने तक इसकी प्रस्तुतियाँ होती रहती हैं, क्योंकि यह वह अवधि है जिसमें बारिश का कोई डर नहीं होता है और निवासी निश्चिन्त रूप से अपना काम करते हैं। सीज़न वास्तव में पूजा त्योहारों से शुरू होता है, जो मोटे तौर पर ग्रामीण, बंगाल में फसलो की कटाई के समय के साथ मेल खाता है। ग्रामीण इलाकों में फसल कटाई खत्म होने के बाद पीक सीजन शुरू हो जाता है। सबसे पहले, दुर्गा पूजा (सितंबर के अंत में, अक्टूबर की शुरुआत में), काली पूजा (दुर्गा पूजा के लगभग तीन सप्ताह बाद आयोजित) आदि जैसे धार्मिक त्योहार हैं, जो सामान्य जात्रा सीज़न के अंतर्गत आते हैं। रथ यात्रा, रथ उत्सव, और मनसा पूजा, नाग देवी की पूजा, जुलाई के अंत या अगस्त की शुरुआत में आयोजित की जाती है, लेकिन फिर भी ये यात्रा के लिए उपयुक्त अवसर हैं। आज के समय में जात्रा का मंचन पारंपरिक कार्यक्रमों में करवाया जाता है, जो कभी भी किए जा सकते है। आज के समय के अनुसार जात्रा के स्वरूप में परिवर्तन आया है जैसे कथानक, अवधि, मंचन के स्थान आदि(Sarkar, 1975)।

जात्रा के कलाकार : जात्रा के समूह में अभिनेताओं को बहुत कम उम्र में चुन लिया जाता है। उन्हे छोटी उम्र से ही जात्रा कला की सभी शिक्षाएं दी जाती है, जिसमें संगीत शिक्षा, गायन, अभिनय और संवाद अभ्यास शामिल हैं। जात्रा कलाकार के पहचान के सम्बन्ध में बलवंत गार्गी ने लिखा है- जात्रा अभिनेता को उसके खड़े होने के तरीके से पहचाना जा सकता है, वह खुद को रोकता नहीं बल्कि अपना वजन आगे की तरफ डालता है। भावुक, ऊर्जा से भरपूर, वह उग्र संवाद बोलता है। वह छोटे से मैदान में बवंडर की तरह चलता है। लगातार एक्शन के बावजूद उनकी मजबूत पकड़ बनी रहती है(Gargi, 1966)। इस प्रकार जात्रा के कलाकार अपनी अलग पहचान रखते हैं। इसी तरह जात्रा की वेशभूषा दिलचस्प है, जो समय के कई क्षणों का प्रतिनिधित्व करती है। उन्हें अस्पष्ट प्रकार की अवधि की पोशाकें, या ऐसी पोशाक पहनाई जा सकती है जिसका वास्तविक जीवन से कोई संबंध नहीं है। श्रृंगार अद्भुत और शक्तिशाली है लेकिन यक्षगान या कथकली की तरह परिष्कृत और शैलीबद्ध नहीं है। ग्रीस, मिट्टी के रंग, रासायनिक रंग, सफेद लेड, कोलिरियम, लाल पेंट से लेकर सभी प्रकार के पेंट का उपयोग किया जाता है। चेहरे पर धारियां, रेखाएं चरित्र के अनुसार खींची जाती हैं: राक्षस विशेष रूप से डरावने होते हैं जहां ऊपरी होंठों पर दांत चित्रित होते हैं। इस मेकअप के साथ खर्राटे लेना और दांतों को पीसना डरावना है। मेकअप, हालांकि प्रभावी है, सरायकला मनभावन मुखौटों, अन्य मेकअप शैलियां और ख्याल, भवई आदि के प्राकृतिक मेकअप से बहुत अलग है(Vatsyayan, 1980)। जात्रा के समूहो को, कलाकारों को किसी भी व्यक्तिगत कार्यक्रम तथा सामाजिक कार्यक्रम आदि में बुलाया जाता है।

जात्रा में दो विशेष पात्र केंद्रित हैं;

1. **बीबेक (conscience)** - गाने वालों के समूह में से बीबेक को एक प्रकार से छूट थी, जिससे वह मंच पर आकर पात्रों की भावनाओं और विचारों को बल देता है। जब कोई पात्र कुछ गलत करता है, तो बीबेक उसे गाने के माध्यम से चेतावनी देने के लिए सामने आता है। यदि कोई राजा अन्याय कर रहा हो तो उसे रोकने के लिए बिबेक अचानक प्रकट हो जाते हैं। पागलों की तरह कपड़े पहने हुए - उसकी आँखें चमक रही थीं, उसका सिर और पैर नंगे थे, उसकी दाढ़ी उलझी हुई थी - वह काला, केसरिया या सफेद रंग का वस्त्र पहनता था। उनकी हरकतें तीखी और निर्णायक हैं। वह भागते हुए गैंगवे में प्रवेश करता है और उसी तरह गायब हो जाता है। विवेक का एक निश्चित नाटकीय कार्य है। वह गीत के माध्यम से एक्शन पर टिप्पणी करता है, चरित्र की भावना को बाहरी रूप देता है, उसका दोहरा अभिनय करता है, और उससे प्रश्न पूछता है। वह हर किसी की छाया है, कार्यों और घटनाओं पर एक चलती हुई टिप्पणी है। वह भूत, वर्तमान और भविष्य में रहता है(Gargi, 1966)। जो भी विवेक का पात्र अभिनीत करता था वह अपने गाने के बोल के अनुसार पात्र को अपने गायन के माध्यम से उसकी मनोदशा और भाव प्रखर करने को कहता है, जिससे मंच पर लीला और सफल हो सके।

2. नियति (fate) – नियति का सरल अर्थ भाग्य को कहा जा सकता है। है। नियति भी एक अन्य चरित्र है जो शुरुआत से ही जात्रा संस्कृति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह पात्र केवल महिलायें अभिनीत करती हैं, जो मंच पर आकर पात्रों को जीवन में आने वाले परिस्थितियों और खतरे के बारे में अवगत कराती है (Kayal, 2022)।

जात्रा मंडप : किसी भी प्रदर्शन को करने के लिए एक विशेष स्थान चुना जाता है। जात्रा की प्रदर्शन यात्रा में मंडप एक विशेष स्थान रखता है। अति प्राचीनकाल से नाटक की एक शैली यात्रा-नाटक नाम से चली आ रही है। ये यात्रा-नाटक प्रायः खुले मैदान में अभिनीत होते हैं। कहीं एक सभा-मंडप निर्मित कर कंबल, दरी अथवा चटाई बिठा दी जाती है, जिस पर दर्शकगण बैठ जाते हैं। सभा के मध्य में एक रंगभूमि बनाकर एक ओर पर्दा लटकाकर उसके पीछे प्रसाधन के निमित्त साजगृह मान लिया जाता है। साजगृह से रंगभूमि तक आने का संकीर्ण मार्ग होता है। लकड़ी की कुर्सियों पर रेशमी या सूती वस्त्र डालकर सिंहासन बना लिया जाता है। यही सिंहासन नाटक में पात्र रूप से भाग लेने वाले राजा, महाराजा अथवा धार्मिक देवताओं का आसन होता है(कौर, 2021), हालाँकि जात्रा मंडप परंपरा को अब भी वैसे ही रखा गया है, केवल इसके आकार को दर्शकों और व्यवस्था के अनुसार घटाया बढ़ाया जाता रहा है।

संवाद : प्रारंभ में जात्रा केवल संगीतात्मक था, जिसमें संगीत, भजन कीर्तन और वाद्यों द्वारा लीलाओं का प्रदर्शन होता है। जात्रा- अभिनेता के पास रचना और भाषण देने की समझ है। वह चार-तरफा दर्शकों से बहुत अच्छी तरह वाकिफ हैं और सभी कोणों से बेहद आकर्षक हैं। इसमें स्पीड है, एक्शन है, तड़क-भड़क है (Gargi, 1966)। 20वीं सदी के आगमन में इसमें संवाद भी जोड़े जाने लगे। जात्रा में कलाकार संवादों को अतिनाटकीय ढंग से बोला करते हैं और अपने हाव भाव को और भी प्रखर रूप से दिखाते हैं।

संगीत एवं वाद्य: जात्रा में संगीत और वाद्यों की प्रमुख भूमिका रही है, जिसमें 'ढोल और करताल की ध्वनि नाटकारंभ से आधा घंटा पूर्व ही सुनाई पड़ने लगती है। फिर नाटक की भूमिका बताई जाती है। प्रधानतः नृत्य, गीति और वाद्य के द्वारा ही नाटक खेला जाता है। वार्तालाप, रोना, हँसना आदि संपूर्ण क्रियाकलाप गेय पदों द्वारा प्रदर्शित होता है(कौर, 2021)। इसके अलावा जात्रा की संगीत शैलियों के प्रकार व संगीत वाद्य निम्नलिखित हैं। जात्रा किसी कि भी मंच पर हो रहा होता है, उसके दोनों तरफ संगीतकार अपने तरह-तरह के वाद्य लेकर बैठते हैं, जैसे-एक तरफ ढोल, झांझ और घंटियों के साथ ताल वादक बैठते हैं वहीं दूसरे तरफ में बांसुरी वादक, वायलिन वादक, शहनाई वादक, हारमोनियम वादक और दो तुरही वादक बैठते हैं। (Gargi, 1966)। इन सभी वाद्यों का संगीत एक लोक धुन पर होता है, जिसे सामान्य सामाजिक व्यक्ति उससे जुड़ और पाये समझ पाए। गाने वालों का समूह (chorus) लोगों के अन्तर्भावनाओं को उन्ही के सामने गाकर प्रस्तुत करते हैं। जात्रा ने कई भाषा और नाट्य संगीत को प्रभावित किया है।

जात्रा की विकास यात्रा: लोक कला के तत्वों को रंगमंच में किस प्रकार शामिल किया जाता है उसका जात्रा एक उत्कृष्ट उदाहरण है। वर्तमान में नए-नए आधुनिक उपकरण जैसे रेडियो, टेलेविजन, फोन आदि आ चूकें, जिससे जात्रा केवल गाँव तक सीमित रह गया है। अब शहर की भागदौड़ में लोगों के पास इतना समय नहीं है कि वह अपनी संस्कृति को देखने जा सकें लेकिन उसके बाद भी जात्रा देखने और सुनने वालो की कमी नहीं है। आज चार घंटे तक चलने वाली जात्रा में केवल छह से आठ गानों के साथ एक्शन से भरपूर संवाद होते हैं। फिर भी इसने अपना संगीतमय चरित्र बरकरार रखा है। लोग उन गानों का इंतजार करते हैं जो अपनी लोकप्रियता से फिल्मों के गानों को टक्कर देते है। लोगों के बीच इस रूप का नाम "जात्रागन" बरकरार है, जिसका अर्थ है "संगीतमय जात्रा।" जब कोई बंगाली किसी प्रदर्शन को देखने जाता है तो वह कहता है कि वह एक जात्रा को "सुनने" जा रहा है। महान गद्य भाषण देने वाले अभिनेता का कहना है कि वह "एक जात्रा गाने जा रहे हैं(Gargi, 1966)। बंगाल और ऑडिशा के जात्रा ने आज अपने नाट्य व संगीत से अलग-अलग रंगमंचीय कलाएं इससे प्रभावित हुई हैं। एक दौर ऐसा भी देखा गया है जिससे जात्रा की लोकप्रियता में कमी देखने को मिलती है पर 1960 में जात्रा को पुनः जीवित करने की शुरुवात हुई और 1961 में जात्रा नाट्य उत्सव आयोजित किया गया और पहली बार इस क्षेत्र में फणी भूषण बिद्याबिनोद को 1968 में संगीत नाटक अकादमी पुरुस्कार मिला। वह पहले जात्रा के कलाकार बने जिन्हे इस पुरुस्कार से सम्मानित किया गया। आज जात्रा के नाट्य व संगीत पर अलग-अलग शोधकर्ता, रंगकर्मी, संगीतकार और संरक्षकों द्वारा शोध किए जा रहे हैं। 'जिस प्रकार यात्रा-नाटक से भारतेंदु प्रभावित हुए, उसी प्रकार भारत के दूरस्थ देशों के यात्री इन नाटकों से अवश्य ही प्रभावित हुए होंगे। यह सिद्धांत स्वीकार कर लेने पर यह कहना ही पड़ेगा कि जनभाषा की नाटक-सृष्टि में यात्रा-नाटकपद्धति चिरकाल से प्रभाव डालती चली आ रही है। बंगला नाटक के उत्थानकर्ता श्री गिरीशचंद्र घोष ने तो यात्रा-मंडली की सहायता से बंगला नाटकों का सृजन और अभिनय किया(कौर, 2021)। जात्रा की स्थिति आज व्यावसायिक हो चुकी है, जिसका औद्योगीकरण बड़े स्तर पर किया जा रहा है और जात्रा आज एक आकर्षक मध्यम स्तर का उद्योग हो रहा है, जो नई प्रतिभाओं, शिक्षित और युवाओं को निर्देशकों, लेखकों और कलाकारों के रूप में शामिल होने के लिए आकर्षित करता है। यह न केवल फला-फूला है बल्कि इसने अपनी अनौपचारिक औद्योगिक स्थिति भी हासिल कर ली है। बहरहाल, कलाकारों के भुगतान की बढ़ती मांग और उच्च और मध्यम वर्ग की जात्रा पार्टियों के बीच प्रतिस्पर्धा के साथ, छोटी मंडलियां केवल जात्रा परंपरा की निरंतरता की संभावनाओं का अनुमान लगा सकती हैं क्योंकि वे व्यवसाय के पूंजीवादी मॉडल का पालन नहीं कर रहे हैं। जो लोग टिकट शो जात्रा करते हैं उन्हें आर्थिक नुकसान की

समस्या का सामना करना पड़ता है और उनके लिए जात्रा 'एक जुआ व्यवसाय' की तरह है। सी और डी श्रेणी की जात्रा मंडलियों के भविष्य पर अपनी समापन टिप्पणी में, सुधीर पति ने कहा कि ओडिशा में धार्मिक त्योहारों की दृढ़ता हमेशा जात्रा को जीवित रहने के लिए प्रेरित करेगी। सरकार टिकट शो जात्रा पर प्रतिबंध लगा सकती है लेकिन संरक्षण के उद्देश्य से वह मुफ्त शो जात्रा पर रोक नहीं लगा सकती(Chhotaray, 2013)।

निष्कर्ष:

इस लेख में बंगाल, ऑडिशा, तथा पूर्वी बिहार में प्रचलित लोक कला 'जात्रा' जिसे यात्रा भी कहा जाता है, के माध्यम से इस अध्ययन में लोक कला 'जात्रा' का इतिहास, अभिनय शैली, गायन, संवाद, जात्रा के कलाकार, नाटक में पात्र, मंडप, संगीतक, वाद्य तथा जात्रा के स्वरूप का विश्लेषण किया गया है| जात्रा परंपरा में संगीत गायन तथा संवाद का महत्व बहुत है। जात्रा में भी जो संगीत गायन यात्रा रही, उसके अंश आज भी किसी को प्रेरित करते हुए मिल जाते हैं। जात्रा लोक कला को जीवित रखने हेतु, जात्रा की प्रतियोगिताएं तथा जात्रा के उत्सव कराये जाने लगे है और आज भिन्न-भिन्न प्रकार से खेला जा रहा है। जात्रा नाटक के कथानक कृष्णा लीला से शुरू होकर समसमायिक परस्थितियों में ढलती रही, जैसे- जात्रा के कथानक में आन्दोलन हो या समाज से जुडा मुद्दा हो या राजनीती से, सब मे जात्रा का प्रमुख योगदान रहा है और जात्रा के कथानक में गायन की शैली ने इसे और भी विशिष्ट बना दिया, यही कारण रहा की यह रंगमंच व्यासायिक भी हुआ और आज तक इसका चलन है। जात्रा की शुरुआत लीला गायन के साथ शुरू हुई पर आगे चलकर इसमें संवाद भी जुड़े, और संगीत और संवाद के मिश्रण के साथ इसके प्रदर्शन में और निखार आया तथा संगीत के साथ-साथ इस शैली की वेशभूषा, मुखसज्जा, संवाद अदाएगी की भी अहम् भूमिका रही है, इसके स्वरूप को बनाये रखने में। जात्रा लोक कला एवं शैली, कलाकार और संगीत को आज लोगों के समर्थन की आवश्यकता है और यह तब ही संभव होगा जब हम अपनी लोक कलाओं को संरक्षित करने के लिए प्रयासरत रहेंगे और सार्थक बदलाव के बारे में सोचेंगे।

सन्दर्भ सूची-

Chhotaray, S. (2013). Jatra Theatre as a Culture Industry: A Study of Popular Theatre from Eastern India . *ISS E-Journal, 1,2.*

Gargi, B. (1966). *FOLK THEATRE OF INDIA*. University of Washington Press.

Vatsyayan, K. (1980). *Traditional Indian Theatre Multiple Stream* (First Edition). National Book Trust, India.

Kayal, A. (2022). Bengali Jatra: Change, Continuity and Reinvention of Folk Theatre in the Age of Globalization. *Global Research and Educational Foundation India, 1,2.*

Keith, A. B. (1988). *The Sanskrit Drama* . Motilal Banarsi Dass Publishers.

Sarkar, P. (1975). Jatra: The Popular Traditional Theatre of Bengal. *Journal of South Asian Literature , 10*, 87–105.

कौरशोभा. (2021). *रंगमंच परम्परा और इतिहास:* Vol. *प्रथम*. संजय प्रकाशन.